ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292RNI
REG. NO. UPBIL/2014/66218 **PP. No.- 70-72**

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-18, No.-IV, Issues-34, YEAR-Oct-Dec. 2024

वृद्धाओं का सामाजिक जीवन

डॉ0 श्रीमती अर्चना सरस्वती
असिस्टेन्ट प्रोफेसर–गृह विज्ञान विभाग, महिला कॉलेज, दाउदनगर (बिहार) भारत

Received-10.10.2024, Revised-16.10.2024, Accepted-20.10.2024 **E-mail : akbar786ali888@gmail.com**

सारांशः मानव जीवन को विभिन्न अवस्थाओं में विभाजित किया गया है। व्यक्ति का जीवन विभिन्न अवस्थाओं से होकर आगे बढ़ता जाता है, इन अवस्थाओं का महत्व पृथ्वी के भौगोलिक परिवर्तन, युगों व काल से कम महत्वपूर्ण नहीं है। जीवनकाल की प्रत्येक अवस्था की अपनी अलग–अलग समस्याएँ हैं। इन समस्याओं का परस्पर संबंध होता है व प्रकृति से प्रत्येक समस्या अलग–अलग होती है। व्यक्ति समस्याओं से जूझने के लिए अवस्था विशेष में अपने–अपने तरीके ढूंढता है, जिनमें कुछ सार्थक तरीके व कुछ निरर्थक तरीके होते हैं व कभी–कभी समस्या का हल नहीं प्राप्त होता है जो कुण्ठा, निराशा व अवसाद को जन्म देती है।

कुंजीभूत शब्द– वृद्धा, सामाजिक जीवन, मानव जीवन, भौगोलिक परिवर्तन, जीवनकाल, सार्थक, निरर्थक, समस्या, कुण्ठा, निराशा

जीवनकाल की विविध अवस्थाओं को चरणबद्ध तरीके से इस प्रकार देखा जा सकता हैः जन्मपूर्व अवस्था (गर्भाधान से जन्म तक), नवजात शिशु (जन्म से दूसरे सप्ताह के अंत तक), शैशवावस्था (दूसरे सप्ताह के अंत से दूसरे वर्ष के अंत तक), पूर्व बाल्यावस्था (दो से छः वर्ष तक), तरुणावस्था (दस या बारह से तेरह या चौदह वर्ष तक), उत्तर बाल्यावस्था (छः से दस या बारह वर्ष तक), पूर्व किशोरावस्था (तेरह या चौदह से सत्रह वर्ष तक), उत्तर किशोरावस्था (सत्रह से इक्कीस वर्ष तक), पूर्व प्रौढ़ावस्था (इक्कीस से चालीस वर्ष तक), मध्यवय (चालीस से साठ वर्ष तक) एवं वृद्धावस्था (साठ से मृत्युपर्यन्त)। इस अवस्था विकासक्रम में व्यक्ति का जीवन कभी भी स्थिर नहीं है बल्कि लगातर परिवर्तित होता रहता है। पूर्व में यह परिवर्तन व्यक्ति की शारीरिक संरचना, कार्य प्रणाली में परिपक्वता को लाता है जबकि बाद के जीवन में यह परिवर्तन बाल्याकाल की तरफ प्रतिगम करता हुआ होता है। इस प्रकार के परिवर्तन को मनोवैज्ञानिक भाषा में जरण कहते हैं, अन्तर्गत मानसिक व शारीरिक संरचना व उनके कार्यशैली में परिवर्तन होता है। वृद्धवस्था का अर्थ 60 वर्ष या उससे अधिक की आयु से है।

अरस्तू ने अपनी पुस्तक 'ऑन योथ एण्ड ओल्ड ऐज', 'ऑन लाइफ ऐण्ड डेथ' एवं 'ऑन रिस्पाइरेशन' में युवावस्था एवं वृद्धावस्था को एक–दूसरे के विपरीत बतलाया है। संवेगों की अभिव्यक्ति आयु वृद्धि के साथ–साथ व परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित होती जाती है। वृद्धावस्था में संरचनात्मक प्रतिक्रियाएँ, प्रसारक व्यवहार, दुःख चिन्ता, आत्मदया, हीनता की भावना, अवसाद, अनिद्रा, चिड़चिड़ापन एवं ऊबाउपन जैसे संवेगात्मक परिवर्तन होते हैं।

वृद्ध होना एक गतिशील प्रक्रिया है। इसके अन्तराल में अनेक प्रकार के जटिल शारीरिक परिवर्तनों का पुंज सम्मिलित होता है। बुढ़ापे में सामाजिक आत्मीयता एवं अभियोजन व्यक्ति के मनोवैज्ञानिक प्रकार्यों को प्रभावित करता है। बुढ़ापे के कारण व्यक्ति में मनोवैज्ञानिक परिवर्तन ही नही होता वरन् उसकी सामाजिक प्रस्थिति भी प्रभावित होती है। बुढ़ापा किसी समाज विशेष की घटना न होकर क सार्वभौमिक घटना है। यह समाज विशेष की निधि नहीं है। इसका अस्तित्व प्रत्येक समाज में देखा जा सकता है। 'जेरन्टोलाजिस्ट्स' लोगों का ऐसा विचार है कि व्यक्ति अपनी अवस्था के कारण वृद्ध नहीं होता है। प्रजातिवाद अथवा यौनवाद की तरह यह एक समूह के सदस्यों के विपरीत भेदमूलक श्रेणी है। साधारणतया सम्पूर्ण जीवन के आधे भां के बाद बुढ़ापे के लक्षण प्रतीत होने लगते हैं। विभिन्न समूह के सदस्यों के लिये 'बुढ़ापा' का पृथक्–पृथक अर्थ है। राजनीतिज्ञ नौकरशाह, कानून अधिवक्ता, चिकित्सक एवं पूजीपति आदि के लिए बुढ़ापा अधिक धनसंचय या शक्ति वृद्धि का द्योतक है। मध्यम वर्ग के लोगों के लिए साधारणतया बुढ़ापा अनिवार्य सेवा–निवृत्ति तथा भविष्य निधि या पेंशन पर आश्रित होना है। गरीब एवं कार्यरत वर्ग के लोगों के लिए बुढ़ापा पूर्ण रूप से आश्रित होने एवं निर्धनता के परिणाम स्वरूप दीन–हीन दशा का परिचायक है। पुरुषों एवं स्त्रियों के लिए 'बुढ़ापा' का भिन्न–भिन्न अर्थ है। उस समाज में इसका अर्थ और भिन्न हो जाता है जहाँ सफलता एवं शक्ति को युवा शक्ति से प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। महिलाओं के लिए बुढ़ापे का विशेष अर्थ होता है। इस अवस्था में महिलाओं के भौतिक सौन्दर्य एवं लावण्य का ह्रास हो जाता है, जो उनके जीवन की अत्यधिक मूल्यावान निधि होती है। चिकित्सा विज्ञान की विभिन्न शाखाओं में आशातीत विकास के कारण जीवन की अवधि में उत्तरोत्तर विकास होता जा रहा है। इस प्रकार के विकास के परिणामस्वरूप बृद्धों की संख्या में भी वृद्धि हुई है।

व्यक्ति की वृद्धावस्था का प्रारम्भ उन विभिन्न दशाओं या परिवर्तनों से सम्बन्धित है जो उसके जीवन में शनैः शनैः घटित होता है। साधारणतया काले–भूरे बालों का सफेद होना, चेहरे पर झुर्रियों का प्रकट होना, स्वतंत्र रूप से कार्य करने में कठिनाई का अनुभव होना, कार्यरत व्यक्ति का अवकाश ग्रहण करना आदि वृद्धावस्था के सूचक माने जाते हैं।

विभिन्न समाज वैज्ञानिकों, मनोवैज्ञानिकों एवं मानवशास्त्रियों ने अपने–अपने दृष्टिकोण से 'बुढ़ापा' को परिभाषित करने का प्रयास किया है। चार्ल्सबेकर के अनुसार 'बुढ़ापा' व्यक्ति में परिवर्तनों का द्योतक है जो समय के पारगमन का परिणाम होता है। ये परिवर्तन दैहिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक एवं आर्थिक हो सकते हैं। बेकर के अनुसार, बुढ़ापा एनाबोलिक एवं 'सेटाबोलिक' अवययों का विशेष योगदान होता है जिससे व्यक्ति का शारीरिक विकास होता है। जीवन के अंतिम चरण में 'सेटाबोलिक' अवयव विशेष रूप से क्रियाशील हो जाते हैं। जीवन के मध्यम में उपर्युक्त दोनों अवयवों में संतुलन स्थापित रहता है। स्टिगलिट्ज के अनुसार बुढ़ापा व्यक्ति के जीवन में एक प्रकार का समय तत्व है जो मृत्यु के साथ ही समाप्त हो जाता है। व्यक्ति के 'बुढ़ापा' में उसके शारीरिक गठन का

अनुरूपी लेखक/ संयुक्त लेखक

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-18, No.-IV, Issues-34, YEAR-Oct-Dec. 2024

बहुत बड़ा योगदान होता है। उदाहरणर्थ, शरीर एवं मस्तिष्क से जराजीर्ण व्यक्ति कम उम्र में ही कब्र में पैर रखने लायक हो जाता है जबकि 60 वर्ष का व्यक्ति भी अपनी शारीरिक बनावट के कारण वृद्ध सा प्रतीत नहीं होता। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि बुढ़ापा शारीरिक प्रकार्यों का ह्रासमान होता है। व्यक्ति के जीवन में एक वर्ष का बीतना उसके कार्य प्रतिपादन की क्षमता में उत्तरोत्तर ह्रास पैदा करता है। ह्रास की यह प्रक्रिया उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है।

एक व्यक्ति को वृद्ध कहा जाय, यह स्वयं में एक विवादास्पद विषय है। चिकित्सा वैज्ञानिक या जैविकीय वैज्ञानिक बुढ़ापा के लिए कोई सीमा निर्धारित नहीं कर पाये हैं। विभिन्न देशों में बुढ़ापा के लिए कानून के माध्यम से एक आयु निर्धारित की गयी है। जिसका अनुसरण करना पड़ता है। विभिन्न देशों में वृद्धावस्था की आयु अलग–अलग है। साधारणतया इस आयु में व्यक्ति समाज के उत्पादक प्रयास के लिए कम लाभप्रद प्रमाणित होता है। उसे अपनी देख–रेख के लिए निश्चित सुरक्षा की आवश्यकता प्रतीत होती है। उदाहरणार्थ संयुक्त राज्य अमेरिका में बुढ़ापे की अवस्था 65 वर्ष तथा भारतवर्ष में 55 वर्ष मानी गयी है। सर्विस में लगे लोगों की वृद्धावस्था सर्विस से कार्यमुक्त होने के बाद प्रारम्भ होती है। भारतवर्ष में वृद्धों की जनसंख्या सम्पूर्ण जनसंख्या का लगभग 74 प्रतिशत है। वृद्धों की इस जनसंख्या में 80 प्रतिशत पुरुष तथा 76 प्रतिशत महिलायें हैं। ये लोग 70 वर्ष की अवस्था तक पहुँचने के पहले इहलीला समाप्त कर देते हैं। ऐसा देखा गया है कि साधारणतः पुरुषों की अपेक्षा वृद्ध महिलायें वृद्धावस्था के अभिशाप से अधिक ग्रसित होती हैं।

वृद्धाओं का सामाजिक जीवन– व्यक्ति एक सामाजिक प्राणी है। अतः संसार में उसके दो रूप होते हैं। एक व्यक्तिगत और दूसरा सामाजिक। यही बात वृद्ध महिलाओं के बारे में भी है। उसका एक जीवन अपना निजी या पारिवारीक होता है और दूसरा सामाजिक। जाति–भेद या वर्ग–भेद के हिसाब से इसके रूप पृथक हो सकते हैं, लेकिन विचारधारा में प्रायः साम्यता ही होती है। इस सामाजिक जीवन में प्रत्येक वृद्ध महिला का वास्ता सभी प्रकार के लोगों से पड़ता है। इस सामाजिक जीवन में आत्म सम्मान की भावना प्रबल रहती है। उसे अपने सम्मान के प्रति सब ओर से सजग रहना पड़ता है।

वृद्धावस्था जीवन की अन्तिम अवस्था है। व्यक्ति में आमतौर पर दैहिक एवं मानसिक ह्रास प्रारम्भ हो जाता है। इस प्रकार के ह्रास का प्रमुख कारण प्रेरणा का अभाव है। ऐसे व्यक्ति को जो इस अवस्था में भी सीखने की चाह, स्वयं के आधुनिक समय के साथ जोड़ कर रखने की प्रवृत्ति रखते हैं, उनमें वृद्धावस्था का आगमन धीम गति से होता है। वृद्धावस्था की शुरूआत शारीरिक ह्रास से प्रारम्भ होती है व धीरे–धीरे मानसिक ह्रास होना शुरू होता है। वृद्धावस्था को 'जीवन विस्तार की अन्तिम अवस्था' कहा गया है।

अमरीका में वृद्धों की संख्या में बढ़ोत्तरी होने के बावजूद वहाँ वृद्धों को अल्पसंख्यक समूह का स्तर प्रदान किया जाता है। यह ऐसा स्तर है, जिसके अन्तर्गत वृद्ध व्यक्ति दूसरे समूह से अन्तःक्रिया नहीं करते हैं तथा समाज इन्हें या तो बहुत कम अधिकार देता है या बिल्कुल भी नहीं।

इसी प्रकार का दृष्टिकोण भारतवर्ष में आजकल देखने को मिलता है। इसका प्रमुख कारण वृद्धों के प्रति अनुकूल सामाजिक दृष्टिकोण का न होना तथा रूढ़िवादी दृष्टिकोण का परिवार द्वारा चलन है। वृद्धों को आधुनिक समाज दोयम दर्जे का नागरिक मानता है। समाज यह मानता है कि एक आयु के बाद स्वास्थ्य, आर्थिक दशा व शारीरिक दशा के कमजोर हो जाने से व्यक्ति परिश्रम नहीं कर सकता है। अतः व्यवहारिक समस्यायें उनके लिये चुनौतियाँ बन जाती है, जिसका सामना करने की शक्ति वृद्धों में नहीं रहती है। समाज द्वारा उन्हें 'दोयम का दर्जा' प्रदान करने से उनके मन में सुरक्षा से जुड़े कई सवाल उत्पन्न होते हैं, जिसका उनके व्यक्तिगत, सामाजिक जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ता है। वे अपनी सुरक्षा से जुड़े क्षेत्रों के लिए सतर्क हो जाते हैं। फलस्वरूप जीवन के 'स्वर्णिम' अवसरों से वे दूर होते जाते हैं एवं समाज के अन्य प्रौढत्र सदस्यों द्वारा उन्हें कई स्थितियों में उत्पीड़ित या प्रताड़ित किया जाता है। ऐसी स्थिति भारतीय परिवारों में अक्सर देखने को मिलती है। नारी मन को गहराई से परखने और समझने वाली लेखिकाओं ने इसे प्रसंग में उकेरा है। वृद्ध नारी की मुख्य समस्या अपनी सम्पत्ति पर ही इस उम्र में आकर अधिकार विहीन होना है। यह एक कटु सत्य है व गम्भीर समस्या। इसकी गहराई को हिन्दी साहित्य की जानीमानी लेखिका कृष्ण सोबती ने दृष्टि प्रदान की है, अपने उपन्यास 'समय सरगम' में। एक यथार्थ या समस्याः

एकाएक दरवाजे की घंटी बजी।
माधो ने खोला। मँझले भैया के साथ दो मेहमान।
ड्राइंग रूम में माँ के साथ ईशान और आरण्या को बैठे देखा तो गुस्से को भरसक दबाकर कहा–
ममा, इन्हें अपने कमरे में ले जाइए। हमें कुछ जरूरी बातचीत करनी है।
हम लोग चाय पी रहे हैं! तुम देख ही रहे हो बेटे.....
मैनें इन्हें बहुत मिन्नत से रोका है। यह अभी बैठेंगे।
ईशान और आरण्या आपस में बातचीत करने लगे, जैसे माँ–बेटे के संवाद को सुन रहे हों।
बेटे के दरवाजे पर खड़े–खड़े ही दमयंती ने माधो को घंटी दी। जरा जल्दी से पालक के पकौड़े निकाल लाओ।.....
इधर घी के गर्म होने की महक फैली, उधर बेटे ने दो–तीन बार गैलरी के चक्कर लगाए। जूतों में धसक थी।
माधो प्लेट में पकौड़े लिय ड्राइंग रूम की ओर बढ़ा कि बेटे ने खौलत से प्लेट नीचे दे मारी।
आवाज सुन दमयंती उठीं। बाहर झाँका–माधो क्या हुआ।
कुछ नहीं साहिब, हाथ से यह तश्तरी खिसक गई।
शांत स्वर में दमयंती ने हुक्म किया– इसे बाद में समेटना। जल्दी से और निकाल लो।

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-18, No.-IV, Issues-34, YEAR-Oct-Dec. 2024

बेटे को फड़फड़ाते देखा तो धारदार आवाज में कहा– यहाँ खड़े न रहो। इस घर से बाहर चले जाओ। खबरदार, जो दुबारा यहाँ कदम रखा। समझे। तुम नहीं, मैं हूँ इस घर की मालिक, मैं हूँ।

आरण्या ने तीनों प्यालों में चाय उँड़ेली और दूध चीनी के लिए आगे बढ़ा दी।

लड़के की आँखों में हिंसा उतर आई थी।

सुना नहीं! इस घर में कदम मत रखना।

अंदर से बहू के रोने की आवाज आई।

आरण्या और ईशान उठ खडत्रे हुए।

अब चलें दमयंती! फोन पर पिकनिक की तारीख पक्की करेंगे।

आरण्या ने हाथ मिलाया और खामोशी से दमयंती तक पहुंचाया आपने जो किया है, इसका अधिकार आपको है।

दम्मो के चेहरे पर जाने कैसी बुढ़ापे की घबराहट–सी फैल गई। आरण्या का हाथ दबाकर कहा– आज मेरे साथ रूक जाओ। मेरा बेटा बड़ा कड्डवा कठोर है। रात–भर बकारा करेगा।

स्पष्ट है कि किस प्रकार वृद्ध नारी अपने सामाजिक दायित्व को अपने सामाजिक सम्मान को स्थिर रखने में अपने को इस अवस्था में अक्षम पाती है। कारण वृद्धावस्था तक पहुँचने पर नारी का ह्रदय अपार स्नेह से भर जाता है। यदि संतान नहीं भी होती है तो इनके मन को वात्सल्य भाव अपने आस–पास के परिवेश को स्नेह से सिंचित करना रहता है, पर सन्तान होने के दुःख को भी झेलना आसान नहीं है वृद्धा के लिए।

विश्व के सभी देश वृद्धों के सम्माननीय दृष्टि से देखने की अपील करते हैं, परन्तु वास्तविकता यदि देखें तो उन्हें अल्पसंख्यक मानकर तिरस्कार की दृष्टि से ही देखा जाता है।

समाज में व्यक्ति की भूमिका उसकी योग्यता पर निर्भर नहीं करती है बल्कि इस बात पर कि समाज का उसके प्रति दृष्टिकोण कैसा है। एक समाज वृद्ध व्यक्ति को उसकी भूमिका निर्वाह के लिये कितने अवसर प्रदान करता है। यह भी एक महत्वपूर्ण पक्ष है। कुछ समाज वृद्धों को ऐसी भूमिका प्रदान करते हैं जो प्रतिष्ठा, प्रभुता के सूचक रहते हैं, परन्तु कई बार इसके विपरीत उन्हें हीन, कमजोर समझकर उन्हें किसी भी भूमिका के लिये योग्य नहीं माना जाता है। आयु वृद्धि के साथ वृद्ध व्यक्तियों की भूमिका में परिवर्तन विश्व के किसी भी देश में देखा जाता है।

भारतवर्ष में यह स्थिति परिवार से लेकर समाज के अहम् कार्यक्रमों में देखने को मिलती है। उन्हें वे दर्शक बनाकर रखना ज्यादा पसंद करते हैं। बजाय उन्हें कोई दायित्व या विशेष भूमिका प्रदान कर। प्रत्येक समाज में वृद्ध के प्रति दृष्टिकोण प्रायः समान रहता है, जैसे–उन्हें व्यर्थ समझना, सामाजिक बोझ समझना एवं तदनुसार उनसे व्यवहार करना।

समाज के व्यक्ति वृद्धों के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण रखने के कारण उनसे रूढ़िगत तरीके से व्यवहार करते हैं। जैसे वृद्धों के प्रति संवेदनात्मक व्यवहार करते हैं। जिसका गहरा प्रभाव वृद्धों पर पड़ता है। समाज के इस प्रकार के रवैये से दुःखी होकर वृद्ध घर में समायोजन की समस्या से ग्रसित रहते हैं व अपनी अलग दुनिया बसाने का प्रयास करते हैं।

आज व्यक्ति की कुशलता, बल, गति और शारीरिक आकर्षण को बहुत मान दिया जाता है। फलस्वरूप वृद्ध उनके लिये व्यर्थ रहते हैं। वृद्ध व्यक्ति समाज में उन सम्माननीय लक्षणों से युक्त नहीं होते हैं, जो युवकों से प्रतियोगिता करने के आवश्यक होते हैं। अतः समाज उनके प्रति अनुकूल अभिवृत्ति का विकास नहीं कर पाते हैं। वृद्ध व्यक्ति आर्थिक व सामाजिक गतिविधियों में स्वयं को अक्षम नहीं मानते हैं। अतः दूसरों की तुलना में स्वयं को हीन समझने लगते हैं। समाज का प्रतिकूल दृष्टिकोण उनके लिये बहुत कम सम्माननीय भूमिका छोड़ता है। अक्सर वृद्ध व्यक्ति उन भूमिकाओं को करते हैं, जिनसे समाज के कम आयु वाले लोग बचने का प्रयास करते हैं। समाज वृद्धों के प्रति आदर, सम्मान का दृष्टिकोण नहीं रखता है अतः वृद्ध समाज खिन्न व दुःखी रहता है।

वृद्धावस्था के प्रति प्रतिकूल अभिवृत्तियाँ पीढ़ी दर पीढ़ी चलती हैं जिन्हें बाल्यावस्था से व्यक्ति विकसित करता है। जिन परिवारों में वृद्धों के साथ जैसा व्यवहार बच्चे देखते हैं, बड़े होकर वे हूबहू वैसा व्यवहार करते हैं। घर में रहने वाली वृद्ध महिलाएँ ज्यादातर अपनी भूमिका के प्रति ज्यादा परेशान रहती हैं। घर के कार्यों में नियंत्रण, प्रभुत्व, निर्णय लेने का दायित्व जैसे महत्वपूर्ण भूमिका से उन्हें परिवार के सदस्य अलग कर देते हैं तथा सलाह देते हैं कि आराम से रहो, भजन–पूजन करो, घूमो–फिरो शांति से जीवन यापन करो। उनके पास सीमित आय, ढलता हुआ शरीर तथा सामाजिक सम्पर्क का अभाव उनकी भूमिका की अहमियत को कमजोर बना देता है। ऐसी स्थिति में उनका सुखी, सम्माननीय व आदरपूर्ण जीवन जीना कठिन हो जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. डॉ. सलोचना श्री हरि देशपाण्डेय (2006) : भारतीय समाज में कार्यशील महिलायें, श्रुति पब्लिकेशन, जयपुर।
2. राजेन्द्र यादव (2002) : आदमी कि निगाह में औरत स्त्री विमर्श और स्त्री–लेखन, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पटना।
3. कृष्णा सोबती (2007) : समय सरगम, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली.
4. Soodan, K. S. (1975) : Aging in India, Calcutta, Mincrava Associates (Publications) Pvt. Ltd.
5. Alam, Moneer (2006) : Aging in India Socio-Economic and Health Dimension, Academic Foundation, New Delhi.
6. Srivastava, Ram Chandra (1994) : The problem of old Age, New Delhi, classical publisting company.

*****